पूर्व वैदिक काल एवं उत्तरवैदिक के राजनीतिक एवं धार्मिक काल का विश्लेषण

पूर्व वैदिक काल में राजनीतिक एकता पितृसत्तात्मक पद्धति पर आधारित था। कुल और परिवार से ग्राम और ग्राम से समुदाय ,समुदाय से विष बनता था। विष के समूह से जन तथा जन के प्रधान को राजा कहते थे।जो देश के लिए प्रयोग होता था।उत्तर वैदिक काल में राजा का राजा का पद वंशानुगत हो गया ।जिसे विभिन्न उपाधियां धारण करने लगे। राजा का अधिक अधिकार प्राप्त हो जाने से सभा समिति की शक्तियां घट गई। पूर्व वैदिक काल में मानव जीवन के काल में धर्म और दर्शन में आडंबर और भौतिक क्रियाएं नहीं होती थी परंतु उत्तर वैदिक काल में धर्म का मूल स्वरूप तो पूर्व वैदिक काल जैसा ही रहा लेकिन इसमें कर्मकांड की अधिकता बढ़ गई थी।

यह सत्य है कि एक सभ्यता का जब अन्त हुआ तो दुसरी सभ्यता का अविर्भाव हुआ। जो भी हो यह सर्वविदित है कि सैंघव सभ्यता जब अंतिम सांसे गिन रही थी तो भारत में एक नई सभ्यता का उदय हुआ जो वैदिक सभ्यता के नाम से जाना जाता है।

संघव सभ्यता के निवास द्रविड़ थे तो वैदिक सभ्यता के निवासी आर्य थे। जो भी हो आर्य भारत के स्थायी निवासी नहीं थे। ये भारत के बाहर से आये थे। मध्य एशिया के बैक्ट्रिया नामक स्थान को भी आर्यो का आदि स्थान माना जाता है। मैक्समूलर नामक विद्वान का कहना है- ''एक समय था जबकि भारतीय, इरानी,यूनानी रोमन, रूसो, पैक्ट और जर्मनी के पूर्वज एक ही छत के नीचे रहते थे।'' डाॅ॰ सम्पूर्णानन्द ने सप्त सैंधव को ही आर्यो का आदि देश माना है सप्त सिन्धु प्रदेश में कई आर्य राज्य थे जिसके संस्थापक इच्छवाकु, प्रांशु और सरमाती थे। इन्हें मनु का पुत्र कहा गया है'' आगे चलकर ययाति एक प्रतापी शासक सिद्ध हुआ। इसके समय में आर्यो के दो सम्प्रदाय हो गये।

1. देव याजक 2. असूर याजक कहलाए।

शुकराचार्य के अनुयायी असूरयाजक हुए जो भारत छोड़कर इरान चले गये। आर्यो के राज्य विस्तार में अनेक परिवर्तन हुए।

राजनीतिक गठन की ओर ऋवैदिक काल के राजनीतिक गठन में पितृमूलक परिवार को आधार माना जाता है। पहले वैदिक समाज का गठन कबिले के रूप में था। कबिलों का जन कहते थे, जन में अनेक टुकड़ियाँ होती थी। जो ग्राम कहलाती थी। युद्ध में जन का नेता राजा होता था। बिश या प्रजा राजा का विदथ कहलाती थी।

राजा के कर्तव्य

युद्ध के समय में राजा जन का नेतृत्व करता था। प्रजा भी राजा का अनुशासन मानती थी। शांति के दिनों में वह न्याय प्रदान करता था। राजा के सहायकों में पुरोहित, सेनानी और ग्रामीण थे। विदथ सभा और समिति द्धारा राजा पर नियंत्रण भी रखे जाते थे। राजा की सहायता के लिए गुप्तचर भी होते थे।

पुरोहित आगे चलकर राजमंत्री पद से सुशोभित हुए। सामूहिक कल्याण के लिए यज्ञ का भी आयोजन होता था, युद्ध काल में राजा के लिए विजय कामना करते थे। पुरोहित का पद बड़ा ही महत्वपूर्ण एवं उतरदायित्व पूर्ण था।

सेनानी या सेनापति प्रधान होते थे, ऋग्वेद में ग्रामीणों में सूत रथकार के भी नाम उल्लेखनीय हैं।

ग्रामीणी- राजा के महत्वपूर्ण पदाधिकारी ग्रामीणी होता था। गाँव में शांति बनाना और गाँव के समस्याओं को राजा तक पहुँचाने का काम ग्रामणी करता था।

गुप्तचर- राजा के उल्लेखनीय पदाधिकारी दूत और गुप्तचर होते थे।

विदथ समिति सभा

राजा की शक्ति प्रजा के मंतव्यों से परिचित थी। लोगों की सभा जिसे समिति कहा जाता था, राजा और प्रजा समान रूप से उपस्थित होते थे। सभा श्रेष्ठ जनों की सभा थी। सार्वजनिक बातों का फैसला सभा में होता था।

आदि प्राचीन काल से जो संस्था वैदिक आर्यो की थी उसे ही हम विदथ के नाम से जानते है। सभा और समिति राजनीतिक संस्थाएँ थी।

समिति सम्पूर्ण विश्व की संस्था थी। और राज्य की बागडोर उसी के हाथ में रहती थी उसकी नाराजगी राजा के लिए विपत्ति का सूचक था।

समिति और सभा के अर्थ पर विद्धानों में मतभेद है। परन्तू अथर्ववेद में दोनों को पृथक-पृथक संस्थाओं के रूप में देखा गया है।

राज्याभिषेकः-

ऋग्वेद काल में राज्याभिषेक एक महत्वपूर्ण कार्य था। इसके द्वारा प्रजा और उसके समिति राजा का राज्य कार्य सौपती थी। पुरोहित सेनापति ग्रामीणों एवं अन्य मुख्य कर्मचारी राज्याभिषेक में भाग लेते थे। राजा को मणिराज्य की थाती सांकेतिक चिन्ह था। इस प्रकार राज्याभिषेक के बाद राजा अपने उतरदायित्वों और कार्यो को पूरा करता था।

उत्तरवैदिक काल की राजनीतिक दशा ऋग्वैदिक काल के राजनीतिक दृष्टि पर एक विहंगम नजर डालने से यह प्रतीत होता है कि पूर्व वैदिक काल भी राजनीतिक स्थिति सीमित थी। परन्तु उत्तरवैदिक काल में राजनीतिक स्वरूप में परिवर्तन हुआ। यह अधिक जटिल होता गया। इस काल में तीन अन्य वेदों की रचना हुई। उस काल में आर्यों ने शाक्तिशाली राज्यों की स्थापना की। इसका प्रमाण में सभ्यता और संस्कृति का विकास होने लगा।

मगध और विद्रोह का राजाओं में सम्राट बनने की पद्धति का विकास हुआ। अब प्रजातंत्र के जगह राजतंत्र का गठन हुआ।

राजा के अधिकार में वृद्धि उत्तरवैदिक काल में ऋग्वैदिक काल के अपेक्षा राज्यों को विस्तार अधिक हुआ। इस काल में परिक्षित और जनमेजय जैसे प्रतापी राजाओं का वर्णन मिलता है। अब राज्य एकतांत्रिक राज्य कहलाने लगे। ऐसे राज्य सार्वभौम महत्व राज्य, साम्राज्य आदि बड़े-बडे राज्य थे। ऐसे राजा अश्वमेध, राजस्वी, बाजपेय यज्ञ आदि करने लगे।

राजा का अधिकार

ऋग्वैदिक काल के अपेक्षा उत्तरवैदिक काल में राजा के अधिकार में काफी वृद्धि हुआ। अब राजा वंशानुगत होने लगे। जैसा कि आर. सी. मजूमदार ने लिखा है ''उत्तरवैदिक काल में जातियों के समिश्रण राज्य के आकार में वृद्धि तथा कुछ युद्ध में राजा के सफल नेतृत्व में अनिवार्य रूप से राजा का अधिकार बढ़ा दिया। अब राजा अपनी प्रजा का स्वतंत्र स्वामी होने का दावा करने लगा।''

प्रशासनिक पदाधिकारी

ऋग्वैदिक काल में प्रशासनिक पदाधिकारी पूरोहित सेनानी और गुप्तचर होते थे। परन्तु उत्तरवैदिक काल में पदाधिकारियों की संख्या बढ़ गई जिन्हें वित्त-विभाग निरीक्षण विभाग, आरक्षण एवं सेना विभाग स्थानीय शासन विभागमुक्त थे। मंत्रियों का उत्तरवैदिक काल में रटीनन कहते थे। पुरोहित धार्मिक कार्य करने वाला राजन शासक वर्ग का प्रतिनिधि, महिषी, पटरानी बाबाता युवराज, सारथी, सेनानी ग्रामीणी क्षत्रिय संग्रहिता आय-व्यय का लेखा करने वाला कहलाया।

उत्तरवैदिक काल में सभा और समिति राजा की निरंकुशता पर अंकुश लगाने वाली थी। जबकि ऋग्वैदिक काल में राजा निरंकुश नहीं होता था। इसलिए सभा और समिति का उत्तरवैदिक काल में भी अधिकार दिया गया था। परन्तु ऋग्वेद काल से कम था।

न्याय प्रशासन

ऋग्वैदिक काल में भी न्यायिक प्रशासन राजा शांति काल में करता था। परन्तु उत्तरवैदिक काल में न्यायिक प्रशासन वृहद हो गया। चुँकि ऋग्वैद काल में चोरी-डकैती व्यभिचार हत्या अधिक बढ़ गया, इसलिए छोटे-मोटे अपराधों का गाँव में ग्रामीणों नामक अधिकारी न्याय करता था। उत्तरवैदिक काल में हत्या के दण्ड़ स्वरूप मृत व्यक्ति के रिश्तेदारों को एक सौ गायें देने की प्रथा प्रचलित थी इस काल में आर्यों के न्याय के प्रति गहरी निष्ठा थी।

ऋग्वैदिक काल एवं उत्तरवैदिक काल का धर्म ऋग्वैदिक काल में धर्म कर्म बहुत ही सरल था इस समय ऋषि-मुनी केवल यज्ञ करते थे। और अग्नि की पूजा करते थे। यज्ञ में विभिन्न प्रकार के लकड़ी, धी, दही, दूध, चावल और घूप जैसे सामग्री डालकर हवन करते थे। इस काल में धर्म में दिखावापन नहीं था मूर्तियों के होने का भी कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता है। वैदिक देवता, प्रकृति, के बड़ी शक्तियों कल्पनात्मक मूर्ति मानव रूप थे। उनकी कल्पना मधुर और शौम्य थे। वे आकाश, वरूण, की पूजा करते थे। पीपल और बरगद का भी पूजा करते थे। इन्द्र के हाथ

में बिजली का बज्र है। जिसे वह दानव का संहार करते है। इन्द्र आर्यो का देवता है। और युद्ध में आर्यो का नेतृत्व कर्ता है। उषा एक सुन्दरी के रूप में प्रगट होती है और सूर्य उसका अनुगमन करता है। सूर्य पृथ्वी पर रश्मियों फैलाकर संसार को जीवन देता है। बिष्णु की कल्पना का विवरण मिलता है। इसके आलावे पशुपति नामक जटाधारी शिव की कल्पना भी हुई है। ऋग्वेद में प्रकृति की उपासना है जो नारी और पुरूष के युग्म से सम्पूर्ण विश्व की सृष्टि करते है।

परन्तु उत्तरवैदिक काल में धर्म में काफी अन्तर आ गया है। यथर्ववेद में वरूण सम्बन्धी कई सुन्दर सुक्त है। फिर भी उसकी महिमा में कमी आ गई है। एकेश्वरवाद पद्धति में जागृत हो रही है। प्रजापति की महिमा बढ़ने लगी थी। उसने इन्द्र का स्थान ले लिया। रूद्र की महिमा बढ़ी। रूद्र और शिव का समन्वय हुआ। इसी काल में बिष्णु के तीन पगों की कल्पना का विकास हुआ।

कर्मकांड में तुलनात्मक परिवर्तन ऋग्वेद काल में धार्मिक कर्मकांड बिल्कुल नहीं था, ब्राहम्ण जाति की उत्पति नहीं हुई थीं। आर्य लोग प्रकृति की पूजा करते थे। जिसमें सूर्य प्रभात, संध्या, तारे, यज्ञ, अग्नि आदि की उपासना की जाती थी।

परन्तु उत्तरवैदिक काल में धार्मिक कर्मकांड में जटिलता आ गई। धार्मिक कर्मकांड को पूरा करने के लिये अब ब्राहमणों का उदय हुआ। ब्रहमण, धार्मिक कर्मकांड के लिए आरक्षित हो गये।

अब शिव, गणेश, विष्णु, ब्राहणी आदि की पूजा की जाने लगी। मूर्तियों का निर्माण होने लगा। मन्दिरों में देवताओं को स्थापित किया जाने लगा। अब मुक्ति, कर्मवाद और पूर्नजन्म पर विशेष जोर दिया जाने लगा।

उत्तरवैदिक काल में मंत्रों का महत्व बढ़ने लगा। पूरोहितों के मान और सम्मान में भी वृद्धि हुई। यज्ञों की विधि जटिल हो गई, ऐसे समय में बिष्णु एवं शिव महत्वपूर्ण देवता बन गए।

अवतार एवं आडंबर

पूर्ववैदिक काल में अवतारवाद नहीं था, धर्म में कोई आडंबर नही था। परन्तु धार्मिक महत्व जैसे-जैसे बढ़ता गया वैसे-वैसे उतरवैदिक काल में देवों के आलावे पितरों का तर्पण श्राद्ध भी प्रारंभ हो गया। मृत्युपरांत स्थिति के सम्बन्ध में अविचार शंका में डुबे हुए थे। परन्तु इस काल में अंध विश्वास बढ़ जाने से जादू-टोने भूत-प्रेत में लोगों का विश्वास करने लगे। शिव को अब महादेव कहा जाने लगा।

धार्मिक दर्शन

ऋग्वैदिक काल में धार्मिक, दर्शन, अत्यंत ही अन्य कोटि का था। इस काल में धार्मिक दर्शन, प्रकृति और आत्मा की ओर चक्र लगा रहें थे। लेकिन उतरवैदिक काल के आते-आते धार्मिक धर्म में महान परिवर्तन हो गया। अब एकेश्वरवाद की प्रवृति बढ़ने लगें। साथ ही बहुदेववाद दर्शन का भी अविर्भाव हुआ। ऋग्वेद काल में उपनिषदों का सार है ''सृष्टि ब्रह्र है, परन्तु ब्रह्र आत्मा है।6

इस काल में पूर्ववैदिक काल के अपेक्षा दर्शन में सांख्य योग न्याय, और उतर मिमांशा का अनुकरण हुआ। जिसने शुक्र का रूप धारण कर पृथ्वी को पाताल, की जल से उपर उढाया और जो सृष्टि निर्माण के समय कक्षप हो गये।

इस प्रकार धार्मिक तुलना की दृष्टि से ऋग्वैदिक काल और उत्तरवैदिक काल में सबसे बड़े अन्तर है।

उत्तरवैदिक काल में ब्रह्र केवल सत्य नहीं वरण सत्यचित और आनंदमय दिख पड़ा आत्मा ब्रह्र के ही ज्योति है। उपनिषद कारों ने कर्मकांड को बहुत ही गोण स्थान दिया है। पूर्व वैदिक काल की सरलता का उत्तरवैदिक काल में जाती रही। अब सब कुछ कठोर हो गया।

उपसंहार के रूप में यह कहा जा सकता है कि पूर्ववैदिक काल और उतर वैदिक काल की राजनीति और धर्म में काफी अंतर है। यद्यपि आर्य संस्कृति काफी उन्नति काल परन्तु उत्तरवैदिक कालीन संस्कृति पूर्ववैदिक कालीन तुलना में भौतिकता की और अधिक विकसित थी। वास्तव में पूर्ववैदिक काल के आदर्शो को उत्तरवैदिक काल में धुमिल होता हुआ नजर आने लगा।